

२ प्रमाणका स्वरूप

द्रव्यप्रमाणानुगमकी उत्पत्ति बतलानेमें जो कुछ कहा गया है उसीसे स्पष्ट है कि यह भिन्न भिन्न गुणस्थानों और मार्गणास्थानोंमें जीवोंका प्रमाण बतलाया गया है। यह प्रमाण चार अपेक्षाओंसे बतलाया गया है - द्रव्य, काल, क्षेत्र और भाव।

१. द्रव्यप्रमाण - द्रव्यप्रमाणके तीन भेद हैं- संख्यात, असंख्यात और अनन्त। जो संख्यान पंचेन्द्रियोंका विषय है वह संख्यात है। उससे ऊपर जो अवधिज्ञानका विषय है वह असंख्यात है और उससे ऊपर जो केवलज्ञानका विषय है वह अनन्त है^१ (जं संखाणं पंचिंदियविसओ तं संखेज्जं णाम। तदो उवरि जं ओहिणाणविसओ तमसंखेज्जं णाम। तदो उवरि जं केवलणाणस्सेव विसओ तमणंतं णाम। (पृ. २६७-२६८))।

संख्यातके तीन भेद हैं- जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट। गणनाका आदि एकसे माना जाता है। किन्तु एक केवल वस्तुकी सत्ताको स्थापित करता है, भेदको सूचित नहीं करता। भेदकी सूचना दोसे प्रारंभ होती है और इसीलिये दोको संख्यातका आदि माना है^२ (एयादिया गणणा, वीयादीया हवेज्ज संखेज्जा^१। (त्रि. सा. १६)। जघन्यसंख्यातं द्विसंख्यं तस्य भेदग्राहकत्वेन एकस्य तदभावात्। (गो. जी. जी. प्र. टीका ११८ गा.)) इस प्रकार जघन्य संख्यात दो है। उत्कृष्ट संख्यात आगे बतलाये जानेवाले जघन्य परीतासंख्यातसे एक कम होता है। तथा इन दोनों छोरोंके बीच जितनी भी संख्यायें पाई जाती हैं वे सब मध्यम संख्यातके भेद हैं।

असंख्यातके तीन भेद हैं- परीत, युक्त और असंख्यात। इन तीनोंमेंसे प्रत्येक पुनः जघन्य, मध्यम और उत्कृष्टके भेदसे तीन प्रकारका होता है। जघन्य परीतासंख्यातका प्रमाण अनवस्था, शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका ऐसे चार कुंडोंको द्वीपसमुद्रोंकी गणनानुसार सरसोंसे भर भरकर निकालनेका प्रकार बतलाया गया है, जिसके लिये त्रिलोकसार गाथा १८-३५ देखिये। आगे बतलाये जानेवाले जघन्य युक्तासंख्यातसे एक कम करने पर उत्कृष्ट परीतासंख्यातका प्रमाण मिलता है, तथा जघन्य और उत्कृष्ट परीतके बीचकी सब गणना मध्यम परीतासंख्यातके भेद रूप है।

जघन्य परीतासंख्यातके वर्गित-संवर्गित करनेसे अर्थात् उस राशिको उतने ही वार गुणित प्रगुणित करनेसे जघन्य युक्तासंख्यातका प्रमाण होता है। आगे बतलाये जानेवाले जघन्य असंख्यातासंख्यातसे एक कम उत्कृष्ट युक्तासंख्यातका प्रमाण है और इन दोनोंके बीचकी सब गणना मध्यम युक्तासंख्यातके भेद हैं।

जघन्य युक्तासंख्यातका वर्ग (य+य) जघन्य असंख्यातासंख्यात कहलाता है, तथा आगे बतलाये जानेवाले जघन्य परीतानन्तसे एक कम उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होता है और इन दोनोंके बीचकी सब गणना मध्यम असंख्यातासंख्यातके भेदरूप है।

जघन्य असंख्यातासंख्यातको तीन वार वर्गित संवर्गित करनेसे जो राशि उत्पन्न होती है उसमें धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, एक जीव और लोकाकाश इनके प्रदेश तथा अप्रतिष्ठित और प्रतिष्ठित वनस्पतिके प्रमाणको मिलाकर उत्पन्न हुई राशिको पुनः तीन वार वर्गित संवर्गित करना चाहिये। इसप्रकार प्राप्त हुई राशिमें कल्पकालके समय, स्थिति अनुभाग बधाध्यवसायस्थानोंका प्रमाण तथा योगके उत्कृष्ट अविभाग प्रतिच्छेद मिलाकर उसे पुनः तीन वार वर्गित संवर्गित करनेसे जो राशि उत्पन्न होगी वह जघन्य परीतानन्त कही जाती है। आगे बतलाये जानेवाले जघन्य युक्तानन्तसे एक कम उत्कृष्ट परीतानन्त का प्रमाण है, तथा बीचके सब भेद मध्यम परीतानन्त है।

जघन्य परीतानन्तको वर्गित संवर्गित करनेसे जघन्य युक्तानन्त होता है। आगे बताये जानेवाले जघन्य अनन्तानन्तसे एक कम उत्कृष्ट युक्तानन्तका प्रमाण है, तथा बीचके सब भेद मध्यम युक्तानन्त होते हैं।

जघन्य युक्तानन्तका वर्ग जघन्य अनन्तानन्त होता है। इस जघन्य अनन्तानन्तको तीन वार वर्गित संवर्गित करके उसमें सिद्ध जीव, निगोदराशि, प्रत्येक वनस्पति, पुद्गलराशि, कालके समय और अलोकाकाश, ये छह राशियां मिलाकर उत्पन्न हुई राशिको पुनः तीन वार वर्गित संवर्गित करके उसमें धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्यसंबंधी अगुरुलघुगुणके अविभागप्रतिच्छेद मिला देना चाहिये। इस प्रकार उत्पन्न हुई राशिको पुनः तीन वार वर्गित संवर्गित करके उसे केवलज्ञानमेंसे घटावे और फिर शेष केवलज्ञानमें उसे मिला देवे। इस प्रकार प्राप्त हुई राशि अर्थात् केवलज्ञानप्रमाण उत्कृष्ट अनन्तानन्त होता है। जघन्य और उत्कृष्ट अनन्तानन्तकी मध्यवर्ती सब गणना मध्यम अनन्तानन्त कहलाती है।

(देखो पृ. १९-२६ तथा त्रिलोकसार गाथा ८१-५१)

२. कालप्रमाण - जीवोंका परिमाण जाननेके लिये दूसरा माप कालका लगाया गया है, जिसके भेद प्रभेद इसप्रकार हैं- एक परमाणुको मंद गतीसे एक आकाशप्रदेशसे दूसरे आकाशप्रदेशमें जानेके लिये जो काल लगता है वह समय कहलाता है। यह कालका सबसे छोटा, अविभागी परिमाण है। असंख्यात (अर्थात् जघन्य युक्तासंख्यात प्रमाण) समयोंकी एक आवलि होती है। संख्यात आवलियोंका एक उच्छ्वास या प्राण होता है। सात उच्छ्वासोंका एक स्तोक, सात स्तोकोंका एक लव और साढे अडतीस लवोंकी एक नाली होती है। दो नालीका मुहूर्त और तीस मुहूर्तका एक अहोरात्र या दिवस होता है। वर्तमान कालगणनामें अहोरात्र चौबीस घंटोंका माना जाता है। इसके अनुसार एक मुहूर्त अडतालीस मिनटका एक नाली चौबीस मिनटकी, एक लव ३७ (३१/७७) सेकेंडका, एक स्तोक ५(१८५/५३९) सेकेंडका तथा एक उच्छ्वास (२८८०/३७७३) सेकेंडका पडता है। आवलि और समय एक सेकेंडसे बहुत सूक्ष्म काल प्रमाण होता है।

(देखो पृ. ६५, तथा ति. प. ४, २८४-२८८)

यह कालप्रमाण तालिकारूपमें इस प्रकार रखा जा सकता है ---

अहोरात्र या दिवस	= ३० मुहूर्त	=	२४	घंटे
मुहूर्त	= २ नाली	=	४८	मिनटे
नाली	= ३८॥ लव	=	२४	मिनटे
लव	= ७ स्तोक	=	३७ $\frac{३१}{७७}$	सेकेंड
स्तोक	= ७ उच्छ्वास	=	५ $\frac{१८५}{५३९}$	सेकेंड
उच्छ्वास या प्राण	= संख्यात आवली	=	$\frac{२८८०}{३७७३}$	सेकेंड

आवलि = असंख्यात (ज.यु.असं.) समय

समय = एक परमाणुके एक आकाश प्रदेशसे दूसरे आकाशप्रदेशमें मन्द गतीसे जानेका काल

एक सामान्य स्वस्थ प्राणीके (मनुष्यके) एक वार श्वास लेने और निकालनेमें जितना समय लगता है उसे उच्छ्वास कहते हैं। एक मुहूर्तमें इन उच्छ्वासोंकी संख्या ३७७३ कही गई है, जो उपयुक्त प्रमाणानुसार इस प्रकार आती है- $2 \times 3 \times 2 (9/2) \times 7 \times 7 = 3773$ । एक अहोरात्र (२४ घंटे) में $3773 \times 30 = 9,93,990$ उच्छ्वास होते हैं। इसका प्रमाण एक मिनिटमें $3773 / 84 = 44.9$ आता है, जो आधुनिक मान्यताके अनुसार ही है।

एक मुहूर्तमें एक समय कम करने पर भिन्नमुहूर्त होता है, तथा भिन्नमुहूर्तसे एक समय कम कालसे लगाकर एक आवलि व आवलिसे कम कालको भी अन्तर्मुहूर्त कहा है। (पृ. ६७) इस प्रकार एक अन्तर्मुहूर्त सामान्यतः संख्यात आवलि प्रमाण ही होता है, किन्तु कहीं कहीं अन्तर शब्दको सामीप्यार्थक मानकर असंख्यात आवलि प्रमाण भी मान लिया गया है। (पृ. ६९)

पंद्रह दिनका एक पक्ष, दो पक्षका मास, दो मासकी ऋतु, तीन ऋतुओंका अयन, दो अयनका वर्ष, पांच वर्षका युग, चौरासी लाख वर्षका पूर्वांग, चौरासी लाख पूर्वांगका पूर्व, चौरासी पूर्वका नयुतांग, चौरासी लाख नयुतांग का नयुत, तथा इसी प्रकार चौरासी और चौरासी लाख गुणित क्रमसे कुमुदांग और कुमुद, पद्मांग और पद्म, नलिनांग और नलिन, कमलांग और कमल, त्रुटितांग और त्रुटित, अटटांग और अटट, अममांग और अमम, हहांग और हाहा^१ (हाहांग और हाहा नामक संख्याओंके नाम राजवार्तिक व हरिवंशपुराणके कालविवरणमें नहीं पाये जाते।), हूहांग और हूहू, लतांग और लता, तथा महालतांग और महालता क्रमशः होते हैं। फिर चौरासी लाख गुणित क्रमसे श्रीकल्प (या शिरःकंप), हस्तप्रहेलित (हस्तप्रहेलिका) और अचलप्र (चर्चिका) होते हैं। चौरासीको इकतीस वार परस्पर गुणा करनेसे अचलप्रकी वर्षोंका प्रमाण आता है, जो नव्वे शून्यांकोंका होता है^२ (यह तिलोयपण्णतिके अनुसार है। किन्तु चौरासी को इकतीस वार परस्पर गुणित करनेसे $(28)39$ Logarithm के अनुसार केवल साठ (६०) अंकप्रमाण ही संख्या आती है।)। यद्यपि इन नयुतांगादि काल गणनाओंका उल्लेख प्रस्तुत ग्रन्थभागमें नहीं आया, तथापि संख्यात गणनाकी मान्यताका कुछ बोध करानेके लिये यह सब यहाँ दी गई है। यह सब

संख्यात (मध्यम) का ही प्रमाण है। इससे कई गुणे ऊपर जाकर उत्कृष्ट संख्यातका प्रमाण होता है जो ऊपर गणना-मापमें बता ही आये हैं।

आगे क्षेत्रप्रमाणमें बतलाये जानेवाले एक प्रमाण योजन (अर्थात् दो हजार कोश) लम्बा चौड़ा और गहरा कुंड बनाकर उसे उत्तम भोगभूमीके सात दिनोंके भीतर उत्पन्न हुए मेंढके रोमाग्रों (जिनके और खंड कैंचीसे न हो सकें) से भर दे और उनमेंसे एक एक रोमखंडको सौ सौ वर्षमें निकाले। इसप्रकार उन समस्त रोमोंको निकालनेमें जितना काल व्यतीत होगा, उसे व्यवहारपल्य कहते हैं। उक्त रोमोंकी कुल संख्या गणितसे ४५ अंक प्रमाण आती है और तदनुसार व्यवहारपल्यका प्रमाण ४५ अंक प्रमाण शताब्दियां अथवा ४७ अंक प्रमाण वर्ष हुआ।

इस व्यवहारपल्यको असंख्यात कोटि वर्षोंके समयोंसे गुणित करने पर उध्दारपल्यका प्रमाण आता है, जिससे द्वीप-समुद्रोंकी गणना की जाती है। इस उध्दारपल्यको असंख्यात कोटि वर्षोंके समयोंसे गुणित करने पर अध्दापल्यका प्रमाण आता है। कर्म, भव, आयु और काय इनकी स्थितिके प्रमाणमें इसी अध्दापल्यका उपयोग होता है। जीवद्रव्यकी प्रमाण-प्ररूपणामें भी यथावश्यक इसी पल्योपमका उपयोग किया गया है। एक करोडको एक करोडसे गुणा करने पर जो लब्ध आता है उसे कोड़ाकोड़ी कहते हैं। दस कोड़ाकोड़ी अध्दापल्योपमोंका एक अध्दासागरोपम और दस कोड़ाकोड़ी अध्दासागरोपमोंकी एक उत्सर्पिणी और इतने ही कालकी एक अवसर्पिणी होती है। इन दोनोंको मिलाकर एक कल्पकाल होता है।

३. क्षेत्रप्रमाण - पुद्गल द्रव्यके उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म भागको परमाणु कहते हैं जिसका पुनःविभाग न हो सके, जो इन्द्रियों द्वारा ग्राह्य नहीं और जो अप्रदेशी तथा अंत, आदि व मध्य रहित है। एक अविभागी परमाणु जितने आकाशको रोकता है उतने आकाशको एक क्षेत्रप्रदेश कहते हैं। अनन्तानन्त परमाणुओंका एक अवसन्नासन्न स्कंध, आठ अवसन्नासन्न स्कंधोंका एक सन्नासन्न स्कंध, आठ सन्नासन्न स्कंधोंका एक त्रुटरेणु (त्रुटिरेणु, तृटरेणु), आठ त्रुटरेणुओंका एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणुओंका एक रथरेणु, आठ रथरेणुओंका उत्तम भोगभूमीसंबंधी बालाग्र, आठ उत्तम भोगभूमीसंबंधी बालाग्रोंका एक मध्यम भोगभूमीसंबंधी बालाग्र, आठ मध्यम भोगभूमीसंबंधी बालाग्रोंका एक जघन्य भोगभूमीसंबंधी बालाग्र, आठ जघन्य भोगभूमीसंबंधी बालाग्रोंका एक कर्मभूमीसंबंधी बालाग्र, आठ कर्मभूमीसंबंधी बालाग्रोंकी एक लिक्षा (लीख), आठ लिक्षाओंका एक जू, आठ जूवोंका एक यव (यव-मध्य) और आठ यवोंका एक अंगुल होता है।

अंगुल तीन प्रकारका है- वह उत्सेधांगुल , प्रमाणांगुल और आत्मांगुल। ऊपर जिस अंगुलका प्रमाण बतलाया है वह उत्सेधांगुल (सूचि) है। पांचसौ उत्सेधांगुलोंका एक प्रमाणांगुल होता है, जो अपसर्पिणीकालके प्रथम चक्रवर्तीके पाया जाता है। भरत और ऐरावत क्षेत्रमें जिस कालमें सामान्य मनुष्यका जो अंगुल प्रमाण होता है वह उस उस कालमें उस उस क्षेत्रका आत्मांगुल कहलाता है। मनुष्य, तिर्यच, देव और नारकियोंके शरीरकी अवगाहना तथा चतुर्निकाय देवोंके निवास और नगरके प्रमाणके लिये उत्सेधांगुल ही ग्रहण किया जाता है। द्वीप, समुद्र, पर्वत, वेदी, नदी, कुंड, जगती (कोट), वर्ष (क्षेत्र) का प्रमाण प्रमाणांगुलसे किया जाता है, तथा भृंगार, कलश, दर्पण, वेणू, पटह, युग, शयन, शकट, हल, मूसल, शक्ति, तोमर, सिंहासन, बाण, नाली, अक्ष, चामर, दुंदुभि, पीठ, छत्र तथा मनुष्योंके निवास व नगर, उद्यानादिका प्रमाण आत्मांगुलसे किया जाता है। छह अंगुलोंका पाद, दो पादोंकी विहस्ति (बलिस्त), दो विहस्तियोंका हाथ, दो हाथोंका किष्कु, दो किष्कुओंका दंड, युग, धनु, मुसल व नाली, दो हजार दंडोंका एक कोश तथा चार कोशोंका एक योजन होता है। (ति.प. १,९८-११६)

द्रव्यका अविभागी अंश= परमाणु	८ जूं	= यव
अनन्तानन्त परमाणु = अवसन्नासन्न स्कंध	८ यव	=उत्सेधांगुल
८ अवसन्नासन्न स्कंध = सन्नासन्न स्कंध	(५०० उत्सेधांगुल = प्रमाणांगुल)	
८ सन्नासन्न स्कंध = त्रुटरेणू	६ अंगुल	= पाद
८ त्रुटरेणु = त्रसरेणू	२ पाद	= विहस्ति
८ त्रसरेणु = रथरेणू	२ विहस्ति	= हाथ
८ रथरेणु = उत्तम भो. भू. बालाग्र	२ हाथ	= किष्कु
८ उ. भो. भू. बा. = मध्यम ,, ,, ,,	२ किष्कु	= दंड, युग, धनु, मुसल
८ म. भो. भू. बा. = जघन्य ,, ,, ,,	या नाली	
८ ज. भो. भू. बा. = कर्मभूमि बालाग्र	२००० दंड	= कोस
८ क. भू. बालाग्र = लिक्षा	४ कोस	= योजन
८ लिक्षा = जूं		

अंगुलसे आगेके प्रमाण भी आत्म, उत्सेध व प्रमाण अंगुलके अनुसार तीन तीन प्रकारके होते हैं । एक प्रमाण योजन अर्थात् दो हजार कोश लम्बे, चौडे और गहरे कुंडके आश्रयसे अध्दापल्य नामक प्रमाण निकालनेका प्रकार ऊपर कालप्रमाणमें बता आये हैं। उसी अध्दापल्यके अर्धच्छेद^१ (एक राशि जितनी वार उत्तरोत्तर आधी आधी की जा सके, उतने उस राशिके अर्धच्छेद कहे जाते है ।) प्रमाण अध्दापल्योंका परस्पर गुणा कहनेपर सूच्यंगुलका प्रमाण आता है । सूच्यंगुलके वर्ग को प्रतरांगुल और घनको घनांगुल कहते हैं । अध्दापल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा मतान्तरसे अध्दापल्यके जितने अर्धच्छेद हो उसके असंख्यातवें भागप्रमाण, घनांगुलोंके परस्पर गुणा करने पर जगत्श्रेणीका प्रमाण आता है । जगत्श्रेणीके सातवे भाग प्रमाण रज्जु होता है, जो तिर्यक् लोकके मध्य विस्तार प्रमाण है । जगत्श्रेणीके सातवे भाग प्रमाण रज्जु होता है, जो तिर्यक् लोकके मध्य विस्तार प्रमाण है । जगत्श्रेणीके वर्गको जगत्प्रतर तथा जगत्श्रेणीके घनको लोक कहते हैं ।

ये सब अर्थात् पल्य, सागर, सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगत्श्रेणी, जगत्प्रतर और लोक उपमा मान है, जिनका उपयोग यथावसर द्रव्य, क्षेत्र और काल, इन तीनों अपेक्षाओंसे बतलाये गये प्रमाणोंमें किया गया है । उनका तात्पर्य द्रव्यप्रमाणमें उतनी संख्यासे, कालप्रमाणमें उतने समयोंसे तथा क्षेत्रप्रमाणमें उतने ही आकाशप्रदेशोंसे समझना चाहिए ।

४. भावप्रमाण - पूर्वोक्त तीन प्रकारके प्रमाणोंके ज्ञानको ही भावप्रमाण कहा है (देखो सूत्र ५) । इसका अभिप्राय यह है कि जहाँ जिस गुणस्थान व मार्गणास्थानका द्रव्य, काल व क्षेत्रकी अपेक्षासे प्रमाण बतलाया गया है वहाँ उस प्रमाणके ज्ञानको ही भावप्रमाण समझ लेना चाहिये ।